गांधीवादी आर्थिक दर्शन की प्रासंगिकता

मनबीर सिंह
एम0 बी0 पी0जी0 कॉलेज,
दादरी,
गौतमबुद्ध नगर

सारांश

आज मानव अभूतपूर्व संकट के दौर से जूझ रहा है। जहाँ आज विकास एवं तकनीकी विकास से आश्चर्यजनक परिणाम सामने आ रहे हैं वहीं मानवीय संवेदना समाप्त हो रही है मनुष्य मर रहा है और वह बिना सींग और पूंछ वाला पशु बन गया है। भूमंडलीय गांव के रूप में सिमटते विश्व ने मानवीय मूल्यों,संवेदनाओं,सामाजिक सरोकर और पर्यावरण आदि के संदर्भ में बहुत कुछ खोया है। ऐसे में गांधीवादी आर्थिक चिंतन इन समस्याओं का समाधन करने का संभव विकल्प है हमारी अधिकतर समस्याऐं वस्तुपरक भोगवादी दृष्टि से उत्पन्न हुई है। और इन सभी का सामाधान हमें गांधी जी की सरल जीवनशैली, नैतिक मूल्यों, साधनों की पवित्रता, एकांकी जीवन शैली के बजाय समग्र के साथ जुड़ने तथा शारीरिक श्रम के महत्व में मिल सकता है। गांधी जी के दर्शन का मूल आधार है कि मूल रूप में व्यक्ति और मानव जाति की समस्त समस्याएं नैतिक समस्याएं हैं। ऐसी स्थिति में यदि मनुष्य अपनी अन्तःकरण की आवाज पर कार्य करें तो समाज और विश्व में समस्याएं नाम का विषय ही समाप्त हो जाएगा। जिस समय मनुष्य अपनी तृष्णा के कारण अन्तःकरण की आवाज को नकारता है समस्या उसी समय खड़ी होती है। गत चार दशक भारत सहित विश्व के समक्ष नही समस्याओं को लेकर खड़े हुए है।जिससे गाँधीवादी आर्थिक दर्शन की प्रासंगिकता पर फिर से मंथन एक विकल्प के रूप में होना आवश्यक हो गया है।

मुख्य शब्द : जीवनशैली, तृष्णा, प्रासंगिकता

प्रस्तावना

इन समस्याओं में प्रथम है कि विश्व गत दो दशकों में आतंकवाद और भ्रष्टाचार की पूरी गिरफ्त में आ चुका है। एशिया और यूरोप सहित विश्व के सभी मुल्क इसकी गिरफ्त में आ चुके हैं। इससे हजारों–हजारों जानें जा रहीं हैं, सम्पत्ति का नुकसान हो रहा है ओर आज आतंकवाद विश्व सभ्यताओं को अपने गर्भ में लीलने की सिथति में आ गया है विकसित देशों में भ्रष्टाचार से न जातें कितने राजनेता, नौकरशाहो और सामान्य नागरिकों ने मानवीय मूल्यों का हृास किया है। विश्व को यदि आतंकवाद की काली छाया से बचाना है तथा भ्रष्टाचार मुक्त समाज का निर्माण करना है तो गांधी जी के आर्थिक चिंतन जिसमें सादगी, संयम और प्रकृति के साथ चलने का रास्ता बताया है, अन्तिम विकल्प हो सकता है। प्रथम सारा विश्व आज पर्यावरण और जलवायु सम्बंधी समस्याओ से ग्रस्त है अंधाधुंध औद्योगिकरण और भौतिकवाद के लिए प्रकृति से छेडछाड करके मानव ने प्रकृति जनित पर्यावरण और जलवायु से हस्तक्षेप करके अपने लिये गम्भीर समस्या उत्पन्न कर ली है। ओजोन परत का क्षरण होना मानव के लिये भयानक खतरा है। ग्रीन हाउस गैसों के स्तर में लगातार होता हानिकारक परिवर्तन, भूमण्डल का गर्म होना, ग्लेशियरों का पिघलना आदि पर्यावरण जलवायु सम्बन्धी समस्याओं के स्थायी समाधान एवं तकनीक पूरी तरह असफल रही है और इसके समाधान का विकल्प गांधीवादी मार्ग द्वारा ही किया जा सकता है। तीसरे गत दशक में विश्व ने भयंकर आर्थिक मन्दी का सामना किया है जिसका काफी हद तक प्रभाव आज भी बना हुआ है। इससे विश्व आर्थिक महाशक्ति अमेरिका सहित अन्य देशों में बेरोजगार लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है। बैंकों का दिवाला निकल गया और औद्योगिक संस्थान बन्द हो गये। अनेक लोगों को आत्महत्या तक करनी पड़ी। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था जो विज्ञान एवं तकनीक पर आधारित उद्योगधंधों को पोषती है, पूरी तरह ना कामयाब रही और समाजवाद असफल रहा है। गांधी का सादगीपूर्ण प्रतिमान इन समस्याओं के समाधान का प्रबल विकल्प हो सकता है। द्वितीय पश्चिमी देशों की मानसिकता वाले अर्थशास्त्री और तकनीशियन गत दशकों में अंधाधुंध औद्योगिकीकरण से उत्पन्न समस्याओं से इस कद्र चिन्तित हो उठे हैं कि तकनीकी जनित समस्याओं का समाधान तकनीक हें ही तलाशा जा रहा है। जो एकदम बहुत ही नासमझी एवं गैर जिम्मेदारी का कृत्य है। नयी तकनीक से धरातल पर, हवा में और समुद्र में नये खतरे उत्पन्न हो गये हैं और

नयी नयी समस्याओं से सामना हो रहा है। आज यह भी कहा जाने लगा है कि जिस तेजी से तकनीकी का विकास हो रहा है उससे एक दिन तकनीक ही समाप्त न हो जाये। तीसरे गत 50 वर्षों से गरीब देशों ने अपनी आर्थिक नीतियों एवं कार्यक्रमों में अनेक परिवर्तन किये हैं परन्तु सफलता नहीं मिली है जिसका परिणाम यह हुआ है कि इन देशों की आर्थिक संवृद्धि भी रुक गयी है और ये देश बडी समस्याओं से ग्रस्त होकर रह गये हैं। रोटी, कपड़ा और मकान ये देश अपने नागरिकों को उपलब्ध नहीं करा पा रहे हैं गरीबी, बेरोजगारी और अकाल एवं महामारी की समस्या से नहीं उभर पा रहे हैं इससे अच्छा होता कि विकसित देशों पूंजी प्रधान तकनीक का आयात करने के बजाय अपनी अर्थव्यवस्था के अनुरुप मॉडल तैयार करके अपनाते। तीसरी दुनिया हो या विकसित राष्ट्र या फिर भारत इन समस्याओं का अन्तिम विकल्प गांधीवादी आर्थिक चिन्तन में है जो पूरी तरह मानवीय है, शारीरिक श्रम प्रधान है, जिसके मूल में मनुष्य है जो साधन और साध्य की पवित्रता के प्रबल समर्थक हैं, जिसके नैतिक उच्च स्थान पर हैं और भौतिकतावादी स्थिति से दूर है।

गांधीवादी आर्थिक दर्शन में भ्रांतिवश कई अवसरों पर अर्न्तद्वन्द दिखाई पड़ता है। परन्तु ऐसा नहीं है। गांधी जी का दर्शन रुढ़िवादी नहीं है जिसमें समय के साथ–साथ परिवर्तन स्वीकार किया जाता है, जैसे अपने आरम्भिक समय में गांधी जी उद्योगों के विषय में पूरी तरह विरोध में थे परन्तु बाद में समय और श्रम की बचत वाले उन उद्योगों की वकालत करते दिखते हैं जिसमें मनुष्य का अहित न हो। ऐसे अन्तर्विरोध की स्थिति में अन्तिम निर्णय को स्वीकार करना चाहिए। ''मुझे इस बात की कोई परवाह नहीं है कि मेरे विचारों में अन्तर्विरोध दिखाई पड़ता है। मैंने सत्य की खोज में बहुत से विचारों को छोड़ दिया है और अनेक बातों के बारे में नई जानकारी हासिल की है। ..... जब किसी को मेरे विचारों में अन्तर्विरोध मिले तो, अगर उसे मेरे विवेक पर भरोसा है, तब वह मेरे दो कथनों मे से बाद के कथन को ग्रहण करेगा।''[1]

आधुनिक समय में समाज और देशों की आर्थिक समस्यायों के समाधान में गांधीवादी दर्शन एक 'प्रबल समाधानी विकल्प' है। गांधीवादी आर्थिक दर्शन के मूल में सादगी, भौतिकावादी संस्कृति से दूरी, ग्रामोद्वार, आर्थिक समानता, सामाजिक–आर्थिक सर्वोदय, को विशेष स्थान प्राप्त है। गांधीवादी आर्थिक दर्शन में अहिंसा का प्रमुख स्थान दिया गया है। गरीबी, बालश्रम, निरक्षरता, असमानता, हिंसा, भ्रष्टाचार, आतंकवाद और प्रदूषण से संबंधी समस्याओ के समाधान में गांधी जी द्धारा प्रदत्त मार्ग प्रमुख विकल्प के रुप में प्रयोग किया जा सकता है। गांधीवादी आर्थिक सिद्धान्त ने ऐसे मार्ग का निर्माण किया है जिससे नैतिक, अहिंसक, सम्मयक तथा टिकाऊ समाज का निर्माण हो सकेगा। वे न तो नैतिकता शून्य है और न ही आर्थिक मनुष्य का सिद्वान्त स्वीकारते है। गांधी वादी दर्शन का मूल मनुष्य है जिसमें नैतिक मापदण्ड के सिद्वान्त को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। गांधी दर्शन जो अपने लिए अपेक्षा करता है वही दूसरे के लिए भी। "सबसे निर्धन और निर्बल के चेहरे को याद करो और अपने आप से पूछो कि जो कार्य आप करने जा रहे हैं, उससे उसे किया लाभ मिलेगा? क्या उससे उसे अपने जीवन और भाग्य पर नियंत्रण प्राप्त होगा? क्या उससे भूखे और संतृप्त लोगों को स्वराज मिल पायेगा।"[2]

गांधीवादी आर्थिक चिन्तन में मानवीय समस्याओं के समाधान का समग्र दृष्टिकोण मिलता है जिनमें, व्यक्तिगत, स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर समेत मानव अस्तित्व के सभी प्रमुख स्तरों में सुधार या पुनर्निर्माण किया जा सकता है। गांधीवादी आर्थिक दर्शन पश्चिमी सभ्यता के मानकों और उसके द्वारा अपनाये साधनों को अभिशाप मानते हैं और सभी समस्याओं के मूल को इसी में बताते हैं। ''इस सभ्यता की पहचान तो यह है कि लोग बाहरी दुनिया खोजने में और शरीर के सुख में धन्यता, सार्थकता और पुरुषार्थ मानते हैं। शरीर का सुख कैसे मिले यही आज की सभ्यता ढूंढती है और यही देने की कोशिश करती है। परन्तु वह सुख भी नही मिल पाता। ..... मैं आपके सामने इस सभ्यता का हू–ब–हू चित्र नहीं खींच सकता। यह मेरी क्षमता के बाहर है। लेकिन आप समझ सकेंगे कि इस सभ्यता के कारण अंग्रेज प्रजा में सड़न ने घर कर लिया है। यह सभ्यता दूसरों का नाश करने वाली तथा स्वयं नाशवान है।''[3]

गांधीवादी आर्थिक चितंन भौतिकवादी और अंधाधुंध विकास के विरुद्ध है तथा अनेक समस्याओ का मूल मानाता है। गांधीवादी दर्शन अच्छा खाना पीना, अच्छे घरो में रहना, अधिक सम्पत्ति एकन्नित करना, उन्नत हथियारो का उपयोग करने, कृषि तथा अन्य कार्यों में शारीरिक श्रम के स्थान पर यंत्रों का उपयोग करना, तेज वाहनों से यात्रा करना, लोभ के लिए मानव को गुलाम बनाना, मानवता के लिए उचित नहीं स्वीकारते। आधुनिक विकास की इस अवधारणा ने भोगवादी संस्कृति को जन्म दिया जिससे मनुष्य ने जरुरी और गैर जरुरी वस्तुओं में अन्तर करना बंद कर दिया है। मनुष्य में इन चीजों को प्राप्त करने की तीव्र इच्छा होती है जो कृत्रिम जरुरतों को पूरा करती है। इससे सीमित इच्छा असीमित इच्छा बन जाती है और मनुष्य की तृष्णा में वृद्धि होती है, जो दुख का कारण बनती हैं। इन दुखों को सादगी से समाप्त किया जा सकता है। समस्याओं के समाधान की नींव संयम और सादगी पर टिकती है। इससे मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण किया जा सकता है। मन के अनियंत्रण पर धन के अंबर भी कम लगते हैं। गांधीवादी दर्शन सुख भोग की इच्छा पर नियंत्रण लगा सकता है। '' मनुष्य की वृत्तियां चंचल होती है। उसका मन बेकार की दौड़धूप में लगा करता है। उसे जैसे–जैसे ज्यादा दिया जाये वैसे–वैसे वह ज्यादा मांगता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नही होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढती ही जाती है। इसलिए हमारे पुरखों ने भोग की हद बाँध दी।''[4]

भौतिकवादी भोगपूर्ण संस्कृति का आधार यंत्रीकरण है। यंत्रीकरण के कारण आज समाज एवं विश्व अनेक समस्याओं से ग्रस्त हैं– बेरोजगारी, नक्सलवाद, आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण सम्बन्धी समस्याऐं, समाज के शोषित एवं शोषक वर्गों के हितो में टकराव, अमीरी और गरीबी के बीच बढ़ती दूरी, भ्रष्टाचार, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विघटन एवं आर्थिक मन्दी आदि समस्याओं की जननी अनावश्यक विकास के लिए मशीन के प्रयोग का परिणाम है। गांधीवादी दर्शन द्वारा इन समस्याओं से निजात पायी

जा सकती है। गांधी जी ने संयम, नैतिकता और विकल्पहीनता की स्थिति में ही यंत्रो के प्रयोग का समर्थन किया। गांधीवादी आर्थिक दर्शन परिस्थितियों के अनुसार मशीनों के प्रयोग के विरुद्ध नहीं थे वरन् मशीनों की उस अदृश्य शक्ति के विरूद्ध थे जो उसका निर्माण करने वाले और संचालित करने वाले व्यक्ति की प्रकृति को नष्ट करता है। गांधीवादी दर्शन मशीनों के रचनात्मक पहलू को स्वीकार करती है साथ ही साथ मनुष्य को चेतावनी भी देती है कि अगर यंत्रीकरण पर मनुष्य का उचित नियंत्रण नहीं रहा तो मशीनें उसे अकारण ही अपना शिकार बना लेंगी। गांधी दर्शन यंत्रीकरण के नहीं यंत्रीकरण के उस स्वरुप विरोधी हैं जो मानवता विहीन आत्मा में बदल रही है। गांधीवादी दर्शन गांवों में भारी उद्योग की स्थापना का विरोध करता है परन्तु उन उद्योगों की वकालत करता जिसका निर्माण और संचालन ग्रामीण स्वयं कर सकते हैं। ''..... ऐसी मशीनों व यंत्रों के इस्तेमाल पर एतराज नही होगा जिसको स्वयं गांव वाले बना सके और चला सके। उनका उपयोग दूसरों का शोषण करने के लिए नहीं होना चाहिए।''[5] वे कपड़ा मिलों के विरोधी थे परन्तु चरखा के समर्थक थे। खादी उनके आर्थिक चिन्तन का आधार है। बिनौला निकालने वाली तथा तेल निकालने वाली मशीनों का समर्थन करते थे। परन्तु उन मशीनों का भरपूर विरोध था जिनका उत्पादन वे मशीन करें जिसे ग्रामीण बिना उस मशीन के बना सकें। गांधीवादी दर्शन के अनुसार पूंजी एवं सम्पत्ति का केन्द्रीकरण, समाज का शोषण, नैतिक पतन, शारीरिक श्रम की महत्ता में कमी, शहर और गांवों के बीच बढ़ती दूरी, पर्यावरण प्रदूषण तथा भ्रष्टाचार के जनक एवं पोषक के रुप में देखते हैं। यंत्र सम्मोहित करने वाले, शोषण करने वाले, हिंसा फैलाने वाले, न जाने कितने दोषों का पिटारा हैं''..... यंत्र आज की सम्पन्नता की मुख्य निशानी है और वह महा पाप है और ऐसा मैं साफ देख रहा हूँ। यंत्र सांप का ऐसा बिल है जिसमें एक नहीं बल्कि सैंकड़ों सांप होते हैं। एक के पीछे एक लगा ही रहता है। जहाँ यंत्र होंगे वहां बडे शहर होंगे जहां बडे शहर होगें वहां ट्रामगाडी और रेलगाडी होगी। बिजली बत्ती की जरुरत होगी। प्रमाणिक डॉक्टर आपको बतायेंगे कि जहां ट्रामगाडी एवं रेलगाडी जैसे साधन बढे है, तन्दरूस्ती गिरी है। यंत्रों का गुण तो मुझे एक भी याद आता नहीं जबकि उसके अवगुणों पर मैं एक पूरी किताब लिख सकता हूँ।[6] समय के साथ–साथ गांधीवादी चिन्तन में परिवर्तन आता दिखाई पड़ता है। वे कुछ सीमा तक उद्योगों की स्थापना को स्वीकारते हैं परन्तु उनकी कीमत गांवों के हितों पर नहीं होनी चाहिए और न वे लाभ के उद्देश्य से लगायें जायें। ''मैं (गांधी) गांवों में दस्तकारी के साथ–साथ बिजली, जहाजरानी, लोहाउद्योग, मशीन निर्माण उद्योग आदि भी चाहता हूँ।''[7] वे उन मशीनों के लगाये जाने की बात करते हैं जिसमें श्रम तथा समय की तो बचत हो परन्तु मनुष्य के हितों की कीमत पर नहीं। मशीन मनुष्य के लिए बनें, मनुष्य मशीन का स्वामी रहे न कि गुलाम। शोषण रहित समाज की स्थापना हो, पूंजी का केन्द्रीकरण न हो। ''मेरा विरोध यंत्रों के लिए नहीं है बल्कि उन यंत्रों के पीछे जो पागलपन चल रहा है उसके लिए है। समय और श्रम की बचत हो मैं भी चाहता हूँ, परन्तु किसी खास वर्ग की नहीं बल्कि सारी मानव जाति की होनी चाहिए। सबसे पहले यंत्रों की खोज और विज्ञान लोभ के साधन नहीं होने चाहिए। फिर मजदूरों को उनकी ताकत से ज्यादा काम नहीं लिया जायेगा और यंत्र रुकावट बनने के बजाय मददगार हो जायेंगे। मेरा उद्देश्य तमाम यंत्रों का नाश करने का नहीं है बल्कि उसकी हद बाँधने का है।''[8]

इस तरक्की के बेतुके दौर में गांधीवादी दर्शन द्वारा अनेक समस्याओं का समाधान किया जा सकेगा। इस संदर्भ में यंत्रों सम्बन्धी गांधीवादी चिन्तन की सार्थक प्रासंगिकता है। कुटीर उद्योग धंधे और विकासशील देशों में किसानों का विकास एवं हित एक दूसरे के पूरक हैं। बिना कुटीर उद्योग धंधों के विकास के किसानों का विकास असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। भूमि की उपज के साथ–साथ उस पर आधारित हथकरघा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है– डेरी उद्यान, चमड़ा उद्योग, खादी और चरखा उद्योग, बिनौला और तेल निकालने वाली मशीनें उसका जीवन सुलभ और सहज बना सकती हैं। चरखा और हथकरघा उद्योग को भारतीय ग्रामीण की आर्थिक समृद्धि तथा आर्थिक स्वतन्त्रता के आवश्यक साधन मानना गांधीवादी दर्शन की प्रासंगिकता सिद्ध करता है।

स्वदेशी गांधीवादी आर्थिक चिंन्तन का आद्यार स्तम्भ है! स्वदेशी से आश्रय स्वदेश में देशवासियो द्वारा निर्मित वस्तुओं का उपयोग। गांद्यीवादी चिन्तन की मान्यता है कि विदेशों में तैयार माल का उपयोग से देश और स्वयं के हितों को नुकसान पहुँचाता है। आत्म र्निभरता की प्राप्ति नहीं होती और सम्पत्ति का पलायन होता है। गांधीवादी दर्शन विदेशी मालों के स्थान पर स्वदेशी वस्तु के प्रयोग की वकालत करते हैं। ''मैं किसी से वह कोई भी वस्तु खरीदने से इंकार करता हूँ चाहे वे कितनी भी खूबसूरत क्यों न हो जो मेरे विकास में बाधक हो। मैं उपयोगी साहित्य विश्व के किसी भी कोने से खरीद सकता हूँ परन्तु इंग्लैण्ड या जापान से सर्वश्रेष्ठ किस्म के सूती कपडे का एक इंच भी नहीं खरीदूंगा।''[9] गांधीवादी चिन्तन के स्वदेशी का स्वरुप बडा समग्र है। स्वदेशी का मतलब है– विकेन्द्रकृत अर्थव्यवस्था, ग्राम एवं स्थानीय विकास, सबको रोजगार और सबको स्वावलम्बन। इसका अर्थ स्थानीय आत्मनिर्भरता तथा सहभागिता से भी है। गांधीवादी चिन्तन के अनुसार स्वदेशी शोषण विहीन विश्व का आरम्भ और अन्तिम बिन्दु हो गया। स्वदेशी से शोषक एवं शोषित का अन्तर कम हो जायेगा। ग्रामीण विकास को बल मिलेगा, आत्म निर्भरता आयेगी, हथकरघा उद्योग मजबूत होगा, शहरों पर भार कम होगा, पंजीकरण के दोषों में कमी आयेगी, शारीरिक श्रम का महत्व बढ़ेगा, पूंजी का सकेन्द्रीकरण में कमी आयेगी और एक ऐसे आदर्श समाज की स्थापना होगी जिसमें स्थानीय स्तर पर जीवन की न्यूनतम आवश्यकता– रोटी, कपड़ा और मकान की सुलभता होगी। स्वस्थ, शिक्षा, स्वच्छता और मनोरंजन के साधान स्थानीय स्तर पर ही पूरे हो जायेंगे। ग्रामीण आत्मनिर्भरता के लिए गांधीवादी दर्शन भारत तथा विकासशील देशों में चरखे खादी एवं ग्रामोद्योगों की स्थापना एवं विकास पर बल देते हैं जो पर्यावरण पर भी प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालते। इससे आर्थिक स्वतन्त्रता और समानता को बढावा मिलेगा। स्वदेशी को बढावा देने के लिए गांधीवादी दर्शन अपने उत्पाद की तुलना में दूसरे के श्रेष्ठ

उत्पाद के उपयोग का समर्थन नहीं करते बल्कि अपने निम्नतर उत्पाद के उपयोग की वकालत करते हैं। ''मैं भारत के जरुरतमंद करोड़ों निर्धनों द्वारा काते और बुने गये कपड़ों को खरीदने से इंकार करना और विदेशी कपड़े को खरीदना पाप समझता हूँ। भले ह ीवह भारत के हाथ से कते कपड़े की तुलना में कितना ही बढ़िया किस्म का हो।''[10]

पूंजी का संग्रह एक स्थान पर होना अनेक समस्याओं का घर है। पूंजी को व्यक्ति द्वारा अपना मानना समाज में अनेक बुराईयों को जन्म देती है। गांधीवादी दर्शन का इन समस्याओं का समाधान का प्रयास न्यास पद्धति है यद्यपि उसका पालन कठिन है परन्तु असम्भव नहीं है। पूंजीवाद से उत्पन्न भेदभाव एवं सामाजिक हिंसक और राजकीय पूंजीवाद से उत्पन्न व्यक्तित्व एवं स्वतः प्रेरणा के ह्रास का विकल्प गांधीवादी दर्शन के न्यास पद्धति सिंद्धान्त से किया जा सकता है। इस मत के अनुसार गांधीवादी उत्पादन सामाजिक आवश्यकता के लिए किया जाना चाहिए न कि लाभ के लिए। सम्पत्ति के धारक स्वयं को सम्पत्ति का स्वामी न समझे। इससे असमानता में कमी आयेगी यद्यपि इसे बिल्कुल तो समाप्त नहीं किया जा सकता। ''वृद्धि और अवसर की असमानता सदैव बनी रहेगी। नदी किनारे रहने वाले व्यक्ति को शुष्क मरुषथल में रहने वाले व्यक्ति की तुलना में फसल उगाने में निश्चित रुप से अधिक सुविधा है अगर उस तरह की असमानता स्वरुप से विद्यमान है तो बुनियादी असमानताऐं भी उसी प्रकार से स्पष्ट परिलक्षित होती हैं।''[11]

गांधीवादी दर्शन अलग–अलग क्षेत्र के प्रतिभाशाली व्यक्तियों को अपनी योग्यता के अनुसार ज्यादा सम्पत्ति उत्पादित करने की वकालत करता है और उसका उत्पादन दृढ़ता पूर्वक किया जाये उसका उपयोग सबके हित में करें। ऐसे लोग न्यायी बनकर कार्य कर सकते हैं और इनकी योग्यताऐं राज्य और समाज के लिए वरदान सिद्ध हो सकती हैं। ''मैं (गांधी जी) बुद्धिमान व्यक्तियों को अधिक कमाई करने का अवसर दूंगा, मैं उसकी प्रतिभा का गला नहीं घोटूंगा। लेकिन उसकी अतिरिक्त कमाई का ज्यादा हिस्सा राज्य की भलाई के लिए किया जाना चाहिए। ठीक उसी प्रकार जैसे एक पिता के सभी कमाऊ लड़कों की आमदनी परिवार के साझे कोष में जाती है। ऐसे लोग केवल कमाऊ के रूप में काम करेंगे।''[12]

गांधीवादी चिन्तन के अनुसार सम्पत्ति पर उपभोग के समय सम्पत्ति धारक का अपनी न्यूनतम आवश्यकता को पूरा करने के लिए धन का व्यय करना चाहिए। शेष धन का वह न्यासी की भांति उपयोग करे। अलग–अलग व्यक्तियों कि आवश्यकता का स्तर अलग–अलग होता है। इससे आर्थिक समानता भी आयेगी। ''आर्थिक समानता का वास्तविक अर्थ है– प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार सम्पत्ति की प्राप्ति। यही मार्क्स की परिभाषा है ओर अकेला आदमी भी उतने ही धन की मांग करे जितना की चार बच्चों को विवाहित पिता तो आर्थिक समानता का उल्लंघन होगा।''13

गांधीवादी चिन्तन का न्यासी का सिद्धान्त ह्रदय परिवर्तन की प्रक्रिया पर चलता है। उसे हिंसा के लिए जगह नहीं मिली है। ह्रदय परिवर्तन के लिए भी गांधी दर्शन व्याख्या की गयी है उसे समझा बुझाकर भी इस ओर लाया जा सकता है, उसके विरूध असहयोग आन्दोलन का भी सहारा लिया जा सकता है। गांधीवादी दर्शन के अनुसार इसके विरूद्ध नैतिक समर्थन के साथ जनान्दोलन उतना ही कारगार हो सकता है जितना कहीं दुसरी जगह। आधुनिक कल्याणकारी अर्थशास्त्रियों ने गरीबी, अकाल,, भुखमरी और बुनियादी सामाजिक सेवाओं के सन्तुलित समतापरक विस्तार–विकास की जो अवधारणा प्रस्तुत की है वे गांधीवादी दर्शन से एकदम मेल खाती हैं। बहुत से उद्योगपति यद्यपि लाभ कमाने के उद्देश्य से ही अपना उद्योग लगाते हैं परन्तु वे भी आंशिक रूप से न्यास का ही काम कर रहे हैं। माइक्रोसॉफ्ट के मालिक बिल गेट्स, इन्फोसिस ग्रुप नीलेश कुलकरणी तथा विप्रो के मालिक अजीम प्रेमजी कई तरह से न्यास का कार्य कर रहे हैं। इससे इनका प्रयास अपने कर्मचारियों तक मुनाफा पहुंचाना नहीं है और न बड़ी सम्पत्ति का सार्वजनिक कार्यों में वितरण तक सीमित है बल्कि वे अपने तकनीक कौशल का सार्वजनिक कार्यों में लगातार एक न्यासी की भूमिका निभा रहे हैं।

गंधीवादी आर्थिक चिंतन आर्थिक समानता और आर्थिक विकेन्द्रीकरण का प्रबल हिमायती है आर्थिक समानता से अभिप्राय व्यक्ति की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति के लिए उसे पूरा प्रयत्न करना चाहिए तथा उस पर उसका पूरा अधिकार होना चाहिए। ''मेरी राय में भारत की ही नहीं वरन् समस्त संसार की अर्थ संरचना ऐसी होना चाहिए कि किसी को भी अन्न एवं धन्य के अभाव की पीड़ा न उठानी पड़े। दूसरे शब्दों में हरेक को इतना काम अवश्य मिल जाना चाहिए कि वह अपने खाने–पीने की जरूरतें पूरा कर सके और यह आदर्श निरापद रूप से तभी क्रियान्वित किया जा सकता है जब जीवन की प्राथमिक, आवश्यकता उसी तरह के उपलब्ध होने चाहिऐं जिस तरह की भगवान की दी हुई हवा और पानी हमें उपलब्ध हैं।''[14] आर्थिक समानता से सामाजिक प्रेम बढ़ेगा। किसी वर्ग को वंचित या किसी कार्य को श्रेष्ठ सा निम्न श्रेणी का नहीं माना जायेगा तथा सभी को समान दर्जा प्राप्त होगा। ''मैं ऐसी स्थिति लाना चाहता हूँ जिसमें सबका सामाजिक दर्जा समान माना जाये। मजदूरी करने वाले वर्गों को सैंकडों वर्षों से सभ्य समाज से अलग रखा गया है और उसे नीचा दर्जा दिया गया है। उन्हें शूद्र कहा गया है और इस शब्द का अर्थ किया गया है कि वे दूसरे वर्गों से निम्न हैं। मैं बुनकर, किसान और शिक्षक के लड़कों में भेद नहीं होने दे सकता।''[15]

संदर्भ

1. उद्धृत जयदेव सेठी कृत, गांधी की प्रासंगिकता, पृ0सं0 31.
2. उद्धृत जनसत्ता, 2 अक्टूबर 2003.–(1)
3. हिन्द स्वराज, पृ0सं0 20.
4. हिन्द स्वराज, पृ0सं0 43.
5. उद्धृत जयदेव सेठ, वही, पृ0सं0 26.
6. हिन्द स्वराज, पृ0सं0 79.
7. उद्धृत जयदेव सेठी, वही, पृ0सं0 27.
8. हिन्द स्वराज, प्रस्तावना.
9. उद्धृत जनसत्ता, 2 अक्टूबर 2003.–(2)
10. यंग इण्डिया, 12–3–1925, पृ0 88.
11. यंग इण्डिया, 26–3–1931, पृ0 49.
12. यंग इण्डिया, 26–11–1931, पृ0 368.
13. हरिजन, 31–3–1946, पृ0 63.
14. यंग इण्डिया, 15–11–1928.
15. हरिजन, 15–10–1938.